मोबाइल सिग्नल हैं, जिंदगी नहीं

कोनी कुरैली का आदिवासी बच्चा अमित। अमित अपनी दम पर खड़ा भी नहीं हो पाता है।

राकेश मालवीय

नाम अमित। उम्र तीन साल। वर्ग आदिवासी। वजन लगभग पांच किलो। चेहरा मुर्झाया हुआ। शरीर के नाम पर हड्डियों का ढांचा। अपनी दम पर खड़े होने में भी समर्थ नहीं। अमित हिंदुस्तान की धरती पर जरूर पैदा हुआ, पर उसकी हालत दक्षिण अफ्रीका की दुरूह परिस्थितियों जैसी ही है। ऐसे बीसियों बच्चे सुदूर आदिवासी इलाकों और गांवों में मौजूद है। अमित उस कड़ी का एक हिस्सा मात्र है। दयनीय तो यह है कि जिस बच्चे और गांव को सरकारी योजनाओं की सबसे ज्यादा जरूरत है वही कतार में सबसे पीछे नजर आ रहा है। जहां योजनाएं सबसे पहले पहुंचना चाहिए वहां सबसे बाद में पहुंच पाती हैं, कई बार रास्ते में ही दम तोड़ देती हैं।

रीवा जिले के कोनी कुरैली गांव में मोबाइल के सिग्नल पूरी तरह स्क्रीन पर झिलमिलाते हैं, लेकिन विकास योजनाओं का उजाला अभी इस गांव से कोसों दूर है। रीवा जिले के जवा ब्लॉक के छोर पर बसा आदिवासी बाहुल्य गांव कोनी कुरैली सचमुच विकास की दौड़ में दूसरे समाजों से दशकों पीछे है। सरपट भागती विकास की नई इबारतों और पीछे छूटती जंगल आश्रित जीवन परंपराओं के बीच अब इनका जीवन संघर्ष एक बड़ा सवाल बन गया है। लगभग एक सौ पच्चीस घरों वाले इस गांव के आधे से ज्यारा घरों में चूल्हा कई महीनों से नहीं जला। क्योंकि वे वीरान है। जो घर आबाद हैं उन घरों से कई बार दिन में एक दिन ही धुआं उठ पाता है, मजबूरी है। जंगल अब इतने काबिल नहीं रहे कि केवल उनके सहारे रोजी–रोटी चल पाती। उन पर से हक भी छिन गया। एक मुक्कमल प्रक्रिया के साथ। गांव और आसपास रोजी–रोटी का कोई जुगाड़ नहीं। इसी का नतीजा था कि इस गांव के लोग हैदराबाद, सूरत, मुम्बई जैसे बड़े शहरों में अत्यंत विपरीत परिस्थितियों में काम की तलाश में निकल पड़ते हैं। महीनों तक इनके घर खाली रहते हैं। अमित से भी जिस दिन हम मिले उसी दिन उसका पिता मजदूरी के लिए निकलने वाला था। अमित की मां सुशीला से जब बच्चे की स्थिति पर सवाल किया तो उसने बताया कि इसके जन्म के एक साल बाद ही कोख में दूसरा बच्चा आ गया। इस कारण अमित की ठीक से देखभाल नहीं हो पाई। इससे समाज और लोगों की जागरूकता तो कठघरे में है ही, पर अमित को देखने के लिए न यहां डॉक्टर हैं, न एएनएम और न आंगनवाड़ी कार्यकर्ता। आंगनवाड़ी इस गांव से लगभग तीन किमी दूर है। उस आंगनवाड़ी के रास्ते में भी तमस नदी है और इस पर कोई पुल नहीं बना है। कागजों पर हर चालीस बच्चों पर आंगनवाड़ी होना जरूरी है। चालीस से ज्यादा बच्चे होने पर भी यह गांव आंगनवाड़ी की योजनाओं से वंचित है। कुछ दिनों पहले ही जवा ब्लॉक में महिला एवं बाल विकास तथा स्वास्थ्य विभाग ने मिलकर एक अभियान चलाया।

बच्चों की बदहाली कहीं न कहीं इन आदिवासी परिवारों की आजीविका से भी जाकर जुड़ती है। महात्मा गांधी के नाम से सरकार की महत्वाकांक्षी योजना रोजगार गारंटी भी इस गांव में गांधी की आत्मा दुखाती नजर आती है। अखबार में खबर छपने के बाद जॉब कार्ड तो बन गए पर काम अब तक केवल एक बार ही खुल पाया। उस काम के भुगतान का इंतजार अब भी गांववालों को है। लोगों ने यह भी बताया कि जॉब कार्ड के लिए उन्हें दो सौ रूपए की रिश्वत भी देनी पड़ी। राशन की दुकान की भी यही हालत है। कोनी गांव से यह दुकान लगभग तीन किमी दूर है। आरती बाई ने बताया कि न तेल है, न गेहूं चावल और न शक्कर। यह लोग तो हमें ऐसे ही मूर्ख बनाए हैं।

एनसीपीसीआर अध्यक्ष के दौरे के एक साल बाद

सतना जिले के मझगवां ब्लॉक में भी ऐसी ही स्थिति मिली। इस ब्लॉक के आदिवासी बाहुल्य गांवों तक पहुंचते–पहुंचते जनकल्याणकारी योजनाओं का दम घुट जाता है। इस ब्लॉक में ठीक एक साल पहले राष्ट्रीय बाल संरक्षण आयोग की अध्यक्ष शांता सिन्हा ने दौरा कर स्थिति देखी थी और बाद में प्रशासन को एक पत्र लिखकर निर्देश दिए थे। स्थानीय आदिवासी संघर्ष मंच के कार्यकर्ता प्रतीक और आनंद ने बताया कि दौरे के एक साल बाद भी स्थितियां सुधरी नहीं हैं। उन्होंने बताया कि ब्लॉक के छह गांवों के उन्नीस बच्चों की मौत दर्ज हुई है। इनमें से कई बच्चे तो ऐसे हैं जो आंगनवाड़ी में दर्ज हैं। कई आंगनवाड़ी को विशेष पैकेजे के रूप में हर माह पांच–पांच हजार रूपए विशेष पैकेज के रूप में दिए गए, लेकिन उन पैसों से भी बच्चों में कोई खास सुधार नहीं हुआ। महात्मा गांधी रोजगार गारंटी योजना की हालत यहां भी दयनीय नजर आई। इसलिए इस क्षेत्र से बड़ी संख्या में लोग पलायन कर रहे हैं।
यह क्षेत्र इसलिए भी महत्वपूर्ण था क्योंकि यहां तकरीबन एक साल पहले एनसीपीसीआर, राष्ट्रीय बाल संरक्षण आयोग की अध्यक्ष शांता सिन्हा ने दौरा कर व्यवस्था में सुधार के निर्देश दिए थे। इसके लिए बकायदा एक पत्र भी जारी किया गया था। दीदी एनसीपीसीआर के उस पत्र, दौरे और उसके बाद एक साल की गतिविधियों के बाद के हालात को टटोलने की योजना पहले ही बना चुकी थीं। आदिवासी अधिकार मंच के प्रतीक भाई ने बताया कि अक्टूबर से लेकर नवम्बर 2009 तक यहां के छह गांवों में 19 बच्चों की और मौत हो चुकी थीं। यह बड़ा आंकड़ा था। खासकर उस आंकड़े के बाद जबकि अक्टूबर से लेकर जनवरी 09 तक में मझगंवा ब्लॉक के इन्हीं गांवों में 30 बच्चे मरे थे, और इसी आधार पर एनसीपीसीआर ने यहां दौरा भी किया था। उन्होंने बताया कि इसके बाद रामनगर पुखलाव में तीन, सुआ पहाड़ी में दो, उत्तरी सुआ में दो, पुत. रिहा में दो, डाटन में दो और मडलिहाई में आठ बच्चों की मौत दर्ज हुई थीं। इन गांवों में ज्यादातर मवासी और कोल आदिवासियों के घर हैं। इन गांवों में सरकार ने पांच हजार रूपए अलग से दिए थे। उन्होंने बताया कि सरकार के ही दस्तावेज के अनुसार एक गांव में चार बच्चों के दूध पर बत्तीस सौ रूपए खर्च किए गए, लेकिन उनकी स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ। अपने जमीनी अनुभवों के आधार पर आनंद और प्रतीक का कहना था कि इन बुरे हालात के पीछे सबसे बड़ा कारण खाद्यान्न असुरक्षा है। क्षेत्र में पलायन बड़ा मुद्दा है और लोग यूपी, सूरज, गुजरात, मुम्बई तक काम की तलाश में जाते हैं। रोजगार गारंटी योजना में जॉब कार्ड तो मिलता है, लेकिन जॉब नहीं मिलता। जॉब मिल भी जाए तो मजदूरी नहीं मिलती। सबसे बड़ी गड़बड़ मूल्यांकन पदधति की है। कई जगह इतनी कठोर हैं कि दिन भर मजदूरी करने के बाद भी मजदूरी दस रूपए ही बन पाती है। कई जगह जॉब कार्ड के नाम पर कवर पेज ही पकड़ा दिया गया है। प्रतीक का कहना कि यहां रोजगार गारंटी योजना से लोगों का मोह भंग हो गया है और सरकार के पास ग्यारह सौ करोड़ रूपए का डेटा ही नहीं है। दिलचस्प यह है कि सतना जिले को इस योजना के बेहतर कियान्वयन के लिए देश की राजधानी में अवार्ड मिला है।

सतना जिले के किराईपोखली गांव में सूखी रोटी खाने को मजबूर बच्चा।

राशन कार्ड के नाम पर कागज का टुकड़ा दिखाता नारायण मवासी। गर्मी में बच्चों के तन पर कपड़े भी नहीं है।

जारी है बच्चों की मौत का सिलसिला

किराईपोखरी मझगवां से कोई बीस किमी का गांव। सिंहपुर पंचायत में बसा एक टोला। गर्मी में सरसों की फसल कट जाने के बाद गांव तक जाने का रास्ता बन चुका था। वरना पैदल ही जाना पड़ता। दोनों टोले में कुल मिलाकर 41 घर। इस गांव में कमलेश नाम का एक बच्चा खत्म हुआ। स्थानीय रहवासियों ने बताया कि बच्चा काफी दुबला–पतला था, बस शाम को बीमार हुआ और रात ग्यारह बजे खत्म हो गया। कमलेश का नाम आंगनबाड़ी में भी दर्ज था, लेकिन आंगनबाड़ी की सेवाएं और सुविधाएं इस गांव को नसीब नहीं होतीं। गांव वालों ने बताया कि आंगनबाड़ी केन्द्र यहां से तीन किमी दूर है। गांव में तकरीबन 40 से 45 बच्चे हैं, लेकिन इसके बावजूद यहां कोई सेपरेट आंगनावाड़ी केन्द्र नहीं है। टंकी के पास कभी–कभी मैडम आ जाती हैं और टीकाकरण हो जाता है। राशन की भी यही हालत है। चार किमी दूर सिंहपुर गांव में दुकान है। यहां से बीस किलो अनाज और पांच लीटर कैरोसिन मिलता है। शक्कर साल में एक बार केवल होली के समय मिली, वह भी एक किलो। गांव का एक आदिवासी युवक तो मजदूरी करने हैदराबाद गया था। वह अब गायब है। उसका कोई पता नहीं। स्थानीय युवक कमलेश पिता बुधलाल ने बताया कि अब तो बाहर मजदूरी करने जाने में डर लगता है। रहवासियों ने बताया कि अरहर की दाल तो उन्होंने पिछले एक साल से नहीं खाई। उन्हें खुशी थी कि इस साल उन्होंने अरहर बोई और थोड़ी–बहुत हुई भी है, इसलिए इस साल वे दाल खाएंगे। इसके अलावा गर्मियों में आलू और चना की भाजी ही उनका सहारा है। चना की भाजी बनाने का तरीका भी दिलचस्प है। चना की हरी फसल में से पत्तियों को तोड़कर सुखा लिया जाता है। यह गर्मी के मौसम मे इनका सहारा बनती है। बारिश में जरूर अंगीठा, दुबारी और अन्य भाजी, सब्जी खाने को मिल जाती है। जिस जगह यह बातचीत चल रही थी उसके आसपास हमें बच्चे सूखी रोटी हाथ में लेकर खाते नजर आ रहे थे। गांव में दूध की उपलब्धता के सवाल पर जौहरी लाल का का कहना था कि एक बार बीमार पड़े तो डॉक्टर ने दूध के साथ गोली खाने को कहा। पूरे गांव में दूध खोजा मगर एक कप दूध भी नहीं मिला। अप्रैल आते–आते पेड़ों से महुए पक–पककर टपकने लगते हैं, इन दिनों गांव में सुबह और शाम के वक्त लोग महुआ बीनने जाते हैं। जौहरी लाल की पत्नी ने बताया कि इन दिनों वह महुआ और चना मिलाकर डुबरी बनाते हैं।

जॉब कार्ड की झेराक्स कॉपी दिखाता जौहरी लाल।

जौहरी लाल ने बताया कि 2006 में उन्हें चार महीने में केवल दस दिन सरकारी काम मिला। सरकारी से उनका आशय रोजगार गारंटी योजना के काम से था। उस काम की मजदूरी उन्हें आज तक नहीं मिली है। इसलिए वह दूसरी मजदूरी करने जाते हैं। उनके धरों के आसपास खेत लगे हुए हैं। पर वह उनके नहीं है। जब हमने उनके जॉबकार्ड देखे तो वह खाली थे और कई जगह जॉबकार्ड के झेरॉक्स कॉपी ही रखे थे। किरहाई टोले के दूसरे गांव में हमें राशन कार्ड का भी एक अद्भुत नमूना देखने को मिला। इस गांव के नारायण मवासी के पास राशन कार्ड के नाम पर कागज का एक पुर्जा मात्र था। इसी पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत उन्हें राशन उपलब्ध हो रहा था।

मडुलिहाई मे आंगनवाडी भवन की हालत।

कहर ढा रहा सूखा रोग

अगला पड़ाव था मडुलिहाई गांव। इस गांव में तकरीबन दौ सौ घर हैं। गांव में प्रवेश करते ही हमारी नजर आंगनवाड़ी केन्द्र पर पड़ी। यह एक पुराना भवन था। सारे दरवा. जे खिड़की गायब। कई जगह से छत भी खुली हुई। यहां एक संदेश भी लिखा था पानी नहीं होने के कारण केन्द्र 15 अप्रैल से 30 जून तक घर में संचालित है। इस गांव में भी बच्चों की मौत दर्ज की गई थी। स्थानीय निवासी गुलाब ने बताया कि उनका लड़का नयेलाल दो माह पहले ही अचानक मर गया। देखने में वह कमजोर था और खाना भी नहीं खाता था। उसके इलाज पर भी उन्होंने कोई सात हजार रूपए खर्च कर दिए। इसी तरह उर्मिला पिता तेजबहादुर की मौत भी तेज बुखार आने के बाद हो गई। उसका नाम आंगनवाड़ी केन्द्र में दर्ज था। और वह तीसरे ग्रेड के कुपोषण में आती थी। सोती पिता चमलिया नाम की डेढ़ वर्षीय बच्ची की मौत भी लोगों ने सूखा रोग के कारण बताई। यहां कुपोषण को वह सूखा रोग कहते हैं। इस गांव में भी आंगनवाड़ी केन्द्र, पीडीएस,, स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति अन्य दूरदराज के गांवों की तरह ही दयनीय नजर आई। इस गांव में आंगनवाड़ी कार्यकर्ता से मिलना चाहा। दो बार उनके घर तक गए। पर वह गांव में ही कहीं गईं थीं। संदेशा भिजवाने पर भी नहीं आईं।

पांच हजार का दूध पीकर नहीं मिटा कुपोषण

सुआपहाड़ी। नजदीक ही एक पहाड़ी होने से यह नाम पड़ा होगा। यह टोला पिंजरा पंचायत के अंतर्गत आता है। यहां पर कोल आदिवासियों की संख्या अधिक है। इन आदिवासियों के घर कहीं अधिक व्यवस्थित नजर आते हैं। हम घर में सामने की तरफ दो मंजिले होती हैं। इस टोले में लगभग पचास घर हैं। रहवासियों ने बताया कि यहां लीला पिता गोपाल डेढ़ वर्ष, शिवानी पिता गोरेलाल एक वर्ष और एक शिशु की मौत प्रसव के आधे घंटे बाद ही हुई है। प्रतीक भाई के दस्तावेजों के मुताबिक इस गांव में भी बच्चों के स्वास्थ्य के लिए पांच हजार रूपए की राशि अलग से आई थी। इसमें से चार हजार पांच सौ रूपए केवल बच्चों के दूध पर खर्च किए गए। इसके बाद भी शिशुओं के स्वास्थ्य में कोई खास सुधार नहीं हुआ। कागजों में जरूर बच्चों का वजन लगातार बढ़ना बताया गया लेकिन रहवासियों ने बताया कि यहां लंबे समय से बच्चों का वजन ही नहीं किया गया है। इस गांव में भी लगभग चालीस से ज्यादा बच्चे हैं, लेकिन कोई आंगनवाड़ी सेंटर नहीं खुल पाया है।